डॉ० ललिता ओझा
सहायक प्राध्यापक
संस्कृत विभाग
अल हफीज कालेज
वी० कु० सिं० विवि० आरा
ई-मेल - lalitaojha4@gmail.com

'अथ'

"कारक प्रकरणम्"

कारक प्रकरण संस्कृत व्याकरण का मेरुदण्ड है। "करोति निर्वर्तयति क्रियाम् इति कारकम्" अर्थात् क्रिया का साधक या सम्पादक कारक कहलाता है। संस्कृत व्याकरण में कारकों की संख्या छह निश्चित है-

कर्त्ता कर्म च करणं सम्प्रदानम् तथैव च।
अपादानाधिकरणे इत्याहुः कारणानि षट्॥

क्रिया के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने के कारण सम्बन्ध एवम् सम्बोधन की गणना कारक में न होकर मात्र विभक्ति में होती है।

अब हम प्रथमा आदि विभक्तियों का क्रम से विवेचन करेंगे। इस प्रकरण में विभक्ति आदि का अर्थ एवम् किस अर्थ में किस विभक्ति का प्रयोग होगा, इत्यादि का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जाएगा। सबसे पहला प्रथमा विभक्ति आती है।

"प्रथमा विभक्ति सूत्रम्"

प्रातिपदिकार्थ-लिङ्ग-परिमाण-वचन-मात्रे प्रथमा- २।३।४६ (ल० सि० कौ०)

केवल प्रातिपदिकार्थ, केवल लिङ्ग, केवल परिमाण एवम् केवल वचन (संख्या) का जहाँ बोध कराना हो वहाँ प्रथमा विभक्ति होती है।

प्राचीन सिद्धान्तों के अनुसार-
स्वार्थ (जाति) द्रव्य (व्यक्ति) लिङ्ग, संख्या और कारक, ये पाँच अर्थ प्रातिपदिक के होते हैं तथापि यहाँ पहले दो जाति एवम् व्यक्ति ही लिए जाते हैं क्योंकि लिङ्ग एवम् संख्या अर्थ का ग्रहण जाति एवम् व्यक्ति के आधार पर ही निश्चित होता है। अब क्रमशः इनके उदाहरण प्रस्तुत हैं-

प्रातिपदिकार्थमात्र - उच्चैः, नीचैः, कृष्णः, श्रीः, ज्ञानम्
ये प्रातिपदिकार्थ मात्र के उदाहरण हैं।

उच्चैः नीचैः आदि अलिङ्ग एवम् कृष्ण आदि नियत लिङ्ग शब्द प्रातिपदिकार्थमात्र के उदाहरण हैं।

लिङ्गमात्र इति – लिंगमात्र में – लिङ्ग मात्र के उदाहरण – आनियत लिङ्ग शब्द है जैसे – तटः तटी तटम् – यहाँ जाति और द्रव्य से अधिक लिंगमात्र अर्थ की प्रतीति होती है इसलिए प्रथमा हुई। तट शब्द अनियतलिङ्ग है अर्थात इसका नियत लिङ्ग नहीं है, कभी पुलिंग कभी स्त्रीलिङ्ग और कभी नपुंसक लिङ्ग होता है।

परिमाणेति – परिमाण मात्र मे – द्रोणो ब्रीहिः। यहाँ परिमाण अर्थ में द्रोण शब्द से प्रथमा विभक्ति होगी। द्रोण शब्द का अर्थ है द्रोणपरिमाण और प्रथमा विभक्ति का अर्थ है भी है परिमाण।

वचनमिति – वचन संख्या को कहते हैं। संख्या वाचक शब्दों से संख्या अर्थ मे ही प्रथमा विभक्ति आती है। विभक्ति के द्वारा प्रातिपादिकार्थ संख्या का अनुवाद होता है – जैसे – एकम्, द्वौ, बहवः

सम्बोधने च – २।३।४७॥ (ल०सि०कौ०)

सम्बोधन अर्थ मे प्रातिपादिक से प्रथमा विभक्ति हो। सम्बोधन शब्द का अर्थ है – अच्छी तरह समझना। यह तभी संभव है जब वक्ता श्रोता को अपनी बात सुनने के लिए आकृष्ट करे और श्रोता वक्ता की ओर पूर्ण सावधान हो और ऐसा तभी संभव है जब जोर से पुकारा जाय, यही कारण है कि सम्बोधन पद को जोर से बोला जाता है।

हे राम! – यहाँ सम्बोधन अर्थ मे प्रथमा विभक्ति हुई है।

कर्मसंज्ञासूत्रम्

कर्तुरीप्सित-तमं-कर्म – १।४।४९॥ (ल०सि०कौ०)

कर्तुरिति – कर्ता अपने क्रिया के द्वारा जिसे विशेष

रूप से प्राप्त करना चाहता है, उस कारक की कर्मसंज्ञा हो।

कर्मणि द्वितीया – २।३।२ ॥ – (ल०सि०कौ०)

अनुक्त कर्म में द्वितीया हो।

उदाहरण – हरिं भजति – इस वाक्य में कर्ता का इप्सिततम हरि है। इस लिए इसकी पूर्व सूत्र से कर्मसंज्ञा हुई। भजति :: कर्तृवाच्य की क्रिया है इसलिए कर्म अनुक्त है। अनुक्त कर्म होने से 'हरिम्' यहाँ द्वितीया विभक्ति हुई : परन्तु जब कर्म अर्थ लकार – आदि अन्य प्रत्ययों के द्वारा उक्त हो गया तो प्रातिपादिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति है।

उपान्वध्याङ्वसः – उप, अनु, आङ्, और अधि उपसर्ग रहने पर वस धातु के आधार पर सप्तमी की जगह द्वितीया विभक्ति होती है –

यथा – हरिः वैकुण्ठमुपवसति।

साधवः तपोवनम् अध्यवसन्ति।

श्यामः देशान्तरम् आवसति।

रामः अयोध्याम् अनुवसति।

अधिशीङ्स्थासां कर्म – अधि उपसर्ग युक्त 'शी' 'स्था' और आस धातुओं के आधार में द्वितीया विभक्ति होती है।

यथा – विष्णुः समुद्रम् अधिशेते।

रमा छात्रावासम् अधितिष्ठति।

शिवः कैलाशम् अध्यास्ते।

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

अभितः परितः समयानिकषाहाप्रतियोऽपि – अभितः, परितः, समया, निकषा, हा और प्रति के योग में, इनकी जिससे सन्निकटता पाई जाए, उनमें द्वितीया विभक्ति होती है।

यथा – नदीम् अभितः वृक्षाः सन्ति।

ग्रामं परितः उद्यानानि सन्ति।

नगरं समया निकषा वा नद्यः सन्ति।

हा दुर्जनम्।

दीनं प्रति दयां कुरु।

अनु, अन्तरा, अन्तरेण, अधोऽधः, उपर्युपरि और धिक् के योग में भी द्वितीया विभक्ति होती है।

यथा – रामम् अनु सीता गच्छति।

स उपर्युपरि पर्वतं पश्यति।

धिक् कामुकम्।

करण संज्ञासूत्रम्

साधकतमं करणम् – १।४।४२॥ (ल० सि० कौ०)

क्रिया की सिद्धि में जो सबसे प्रकृष्ट उपकारक अर्थात् सर्वाधिक सहायक कारक हो उसकी करण संज्ञा होती है। प्रकृष्ट उपकारक का अर्थ सबसे अधिक सहायक अर्थात् जिसके व्यापार के अनन्तर क्रिया की सिद्धि होती है, उसे प्रकृष्ट उपकारक कहते हैं।

यथा – रामेण बाणेन हतो बाली – यहाँ बाण के व्यापार-

Oxford

Scanned with CamScanner

के अनन्तर ही हनन क्रिया होती है इसलिए यह प्रकृष्ट उपकारक है।

कर्तृ-करणयोस्तृतीया — २।३।१८॥ (ल० सि० कौ०)

अनुक्त कर्ता और करण में तृतीया विभक्ति हो।

रामेण बाणेन हतो बाली — यहाँ रामकर्ता है, बाण करण है और बाली कर्म।

हत: यहाँ कर्म में प्रत्यय हुआ है इसलिए यहाँ कर्ता और करण दोनो अनुक्त हैं अत: दोनों में तृतीया विभक्ति हुई है।

सहयुक्तेऽप्रधाने (सहार्थे तृतीया) — सह, साकम्, समम् और सार्धम् के योग में तृतीया विभक्ति होती है। क्रिया के साथ सीधा सम्बन्ध रहने पर शब्द प्रधान और पारम्परिक सम्बन्ध रहने पर अप्रधान रहता है।

यथा — पुत्रेण सह पिता आगत: — यहाँ सह के योग में अप्रधान पद पुत्र में तृतीया विभक्ति हुई है।

हेतौ — हेतु के अर्थ में विकल्प से तृतीया विभक्ति होती है। विकल्प से इसमें पंचमी विभक्ति भी होती है-

यथा - पुण्येन पुण्यात वा प्रभु प्राप्यते — पुण्य के प्रभाव से प्रभु मिलते हैं - यहाँ विकल्प से पंचमी विभक्ति हुई है।

येनाऽङ्गविकार: — जिन अंगो के विकार से अंगी का विकार प्रकट हो उन अंगवाचक पदों में तृतीया विभक्ति होती है।

Scanned with CamScanner

यथा — कर्णेन बधिरः, पादेन खञ्जः, पृष्ठेन कुब्जः।

पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम् — पृथक्, नाना, बिना शब्दों के योग में विकल्प से तृतीया विभक्ति होती है।

यथा — ग्रामेण (ग्रामं, अग्रामात् वा) पृथक् मुनयः वसन्ति।

जलेन (जलं, जलात् वा) बिना मत्स्याः न जीवन्ति।

"सम्प्रदानसंज्ञासूत्रम्"

"कर्मणा यम् अभिप्रैति स सम्प्रदानम्" १।४।३२॥ (ल०सि०कौ०)

कर्ता दान क्रिया के कर्म के द्वारा जिससे सम्बन्ध करना चाहता है, वह सम्प्रदानसंज्ञक हो, फलितार्थ यह है कि क्रिया के उद्देश्य को सम्प्रदान कहा जाता है।

चतुर्थी सम्प्रदाने — २।३।१३॥ (ल०सि०कौ०)

सम्प्रदान में चतुर्थी होती है।

यथा — विप्राय गां ददाति — यहाँ कर्ता दान क्रिया के कर्म गौ के द्वारा विप्र के साथ सम्बन्ध करना चाहता है अर्थात् दान क्रिया का उद्देश्य विप्र है अतः विप्र की सम्प्रदान संज्ञा हुई और उससे चतुर्थी हुई।

नमः स्वस्ति-स्वाहा-स्वधाऽलं-वषड्योगाच्च — २।३।१६॥ (ल०सि०कौ०)

नमस्, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम् और वषट् - इन अव्यय शब्दों के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है। स्वाहा देवताओं को और स्वधा पितरों को देने में प्रयुक्त होते हैं।

यथा — हरये नमः। प्रजाभ्यः स्वस्ति। अग्नये स्वाहा।

Scanned with CamScanner

इन्द्राय वषट्, अलं मल्लो मल्लाय।
यहाँ अलम् शब्द का अर्थ समर्थ ग्रहण किया जाता है -
जैसे- दैत्येभ्यो हरिः अलम्।

वषट् शब्द का प्रयोग वेद में देवताओं को देने के अर्थ में होता है।

स्पृहेरीप्सितः - स्पृह धातु के योग में जिस वस्तु की इच्छा की जाए उसमे चतुर्थी विभक्ति होती है -

यथा - लता पुष्पेभ्यः स्पृहयति।

पदाय स्पृहयन्ति नेतारः।

क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोप - क्रुध, द्रुह, ईर्ष्या तथा असूयार्थक धातुओं के योग में जिन पर क्रोध किया जाता है, उनमें चतुर्थी विभक्ति होती है -

यथा - गुरुः शिष्याय क्रुध्यति।

अज्ञाः गुणिभ्यः द्रुह्यन्ति।

रामाय रावणः असूयति।

रुच्यर्थानां प्रीयमाणः - रुच् तथा इसके समानार्थक धातुओं के योग में जिसे जो वस्तु अच्छी लगे, उसमे (रुचनेवाले, प्रिय पात्र में) चतुर्थी विभक्ति होती है -

यथा - हरये रोचते भक्तिः।

ब्राह्मणाय मधुरं प्रियम्।

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

(अपादानसंज्ञासूत्रम)

ध्रुवम् अपायेऽपादानम्- 1/4/24 (ल०सि० कौ०)

अपाय विश्लेष अलग होने को कहते हैं। क्रिया द्वारा किसी वस्तु के अलग होने में भी जो अचल रहे, उसे अपादान कारक कहते हैं।

यथा - वृक्षात पत्राणि पतन्ति। यह पत्रपतन क्रिया द्वारा पत्ते के अलग होने पर भी वृक्ष अचल रहता है अतः वृक्षात् की अपादान संज्ञा हुई।

अपादाने पञ्चमी - अपादान कारक में पञ्चमी विभक्ति होती है।

यथा - ग्रामाद् आयाति- यहाँ गाँव से अलग होना सिद्ध हो रहा है, उसमें अवधि गाँव है अतः उसकी अपादान संज्ञा हुई।

वृक्षात पत्राणि पतन्ति।

आख्यातोपयोगे - नियमपूर्वक विद्याअध्ययन को उपयोग कहते हैं। उपयोग के अर्थ में आख्याता (वक्ता, आचार्य, उपाध्याय, शिक्षक, गुरु आदि) में पञ्चमी विभक्ति होती है

जैसे - छात्रा शिक्षकात् संस्कृतं पठन्ति।

सः उपाध्यायात् व्याकरणं पठति।

सा अध्यापकात् गणितम् अधीते।

जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम - जुगुप्सा (घृणा) विराम (रुकना) प्रमाद (भूल) के समानार्थक शब्दों के योग में पञ्चमी विभक्ति होती है।

Oxford

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

जैसे – 'अध्ययनात् विरमति ।

धर्मात् प्रमाद्यति ।

स्वाधिकारात् प्रमत्तः ।

प्रभृति आदि योगे पञ्चमी – प्रभृति, बहिः परम: आरभ्य, ऊर्ध्वम, अनन्तरम आदि शब्दों के योग से पञ्चमी होती है।

जैसे – शैशवात् प्रभृति अद्य यावत नापकृतम् ।

स ग्रामात् बहिर्गतः ।

को जानाति क्षणात् ऊर्ध्वं किं भवि ।

"षष्ठी विभक्तिसूत्रम"

षष्ठी शेषे – २।३।५०।। (ल०सि० कौ०)

कारक और प्रातिपदिकार्थ से भिन्न स्वस्वामिभाव आदि सम्बन्ध शेष है, उसमें षष्ठी आती है।

सूत्र में शेष पद है, उसका अर्थ है बाकी बाकी अर्थों में षष्ठी हो। कर्त्ता आदि कारकों में तृतीया आदि विभक्ति कही गयी है और प्रातिपादिकार्थ में प्रथमा। इनसे बाकी बचा है, सम्बन्ध रूप अर्थ, उसी में षष्ठी विभक्ति होती है। सम्बन्ध अनेक है; यथा –

सामान्य सम्बन्ध – कूपस्य जलम, नद्याः तरङ्गम ।

विशेष सम्बन्ध – रामस्य माता । घटस्य दण्ड ।
(माता-पुत्र का सम्बन्ध) (कार्य कारण भाव)

रामस्यपत्नी । शरीरस्य अङ्गानि । राज्ञः पुरुषः ।
(दाम्पत्य भाव) (अंगांगिभाव) (स्वस्वामिभाव)

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

षष्ठी चानादरे — जिसका अनादर कर कोई काम किया जाता है उसमें षष्ठी एवम सप्तमी विभक्ति होती है-

यथा — रुदतः (रुदति वा) पुत्रस्य (पुत्रे वा) माता वनं जगाम।

निवारयतोऽपि पितुः (निवारयत्यपि पितरि वा) सः गृहमगच्छत्।

कर्तृकर्मणोः कृतिः — कृत प्रत्ययान्त शब्दों के योग में कर्ता और कर्म में षष्ठी विभक्ति होती है।

यथा - बालानां रोदनं बलम्।

मेघदूतम् कालिदासस्य कृतिः।

धर्मस्य त्वरिता गतिः।

उभयप्राप्तौ कर्मणि — पूर्व सूत्र (कर्तृकर्मणोः कृतिः) से कर्ता और कर्म दोनों में एक साथ षष्ठी प्राप्त हो, वहाँ पर केवल 'अनभिहित' कर्म में षष्ठी हो, कर्ता में नहीं।

यथा - आश्चर्यो गवां दोहोऽगोपालकेन। यहाँ दुह+घञ = दोह कृदन्त है। अगोपालक कर्ता है, गौ, कर्म है। अतएव कृत् प्रत्यय के योग से षष्ठी हुई है। कर्ता अगोपालक में 'कर्तृकरणयोस्तृतीया' सूत्र से तृतीया हुई है।

"अधिकरण संज्ञा सूत्रम"

आधारोऽधिकरणम — १।४।४५॥ (ल० सि० कौ०)

कर्ता और कर्म के द्वारा उसमें रहने वाली क्रियाओं का आधार कारक अधिकरण संज्ञक हो। अधिकरण क्रिया का साक्षात 'आधार' नहीं होता,

Scanned with CamScanner

वह कर्ता और कर्म का आधार होता है।

सप्तम्यधिकरणे च - २।३।३६।। (लं०सि०कौ०)

अधिकरण में भी सप्तमी हो। सूत्र में वर्णित 'च' पद से दूर और अन्तिम अर्थ के वाचक शब्दों में भी सप्तमी होती है

'आधार' तीन प्रकार का होता है-

औपश्लेषिक - उप समीपे श्लेषः सम्बन्ध उपश्लेषः - उपश्लेष से किया हुआ औपश्लेषिक अर्थात जहाँ आधार कर्ता आदि से संयोग आदि सम्बन्ध होता है, वहाँ उसे औपश्लेषिक कहते हैं -

जैसे - कटे आस्ते (चटाई पर है) यहाँ आसन क्रिया के कर्ता का आधार कट के साथ संयोग सम्बन्ध है इसलिए कट औपश्लेषिक आधार है।

वैषयिक - उस आधार को कहते हैं जो विषय को लेकर होता है - जैसे

मोक्षे इच्छाऽस्ति। (मोक्ष के विषय में इच्छा है) यहाँ मोक्ष वैषयिक आधार है क्योंकि यह इच्छा का विषय है।

अभिव्यापक - उस आधार को कहते हैं, जहाँ सम्पूर्ण अवयवों में व्याप्ति होती है

जैसे - तिलेषु तैलम - (तिलों में तेल है) यहाँ तिल आधार है, उसके सभी अवयवों में तेल है, इसलिए यह अभिव्यापक आधार है।

यतश्च निर्धारणम् - यदि किसी वस्तु या व्यक्ति को अपने समुदाय के अन्य अवयवों से किसी विशेषता द्वारा विशेषता निरूपित की जाय तो उस

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

समुच्चयवाचक शब्द में षष्ठी या सप्तमी होती है।

यथा - नृणां नृषु वा विद्वान् श्रेष्ठः।

कवीनां कविषु वा कालिदासः श्रेष्ठः।

यस्य च भावेन भावलक्षणम् (भावे सप्तमी) जिस क्रिया से क्रियान्तर (दूसरी क्रिया) लक्षित हो, उससे सप्तमी विभक्ति होती है। अर्थात यदि किसी पूर्वकालिक क्रिया के काल से दूसरी क्रिया का काल जाना जाए तो उस पूर्वकालिक क्रिया तथा उसके कर्ता एवं कर्म में भी सप्तमी विभक्ति होती है। यथा -

यथा - गोषु दुह्यमानासु गतः - गाय दूहे जाने पर - वह गया। यहाँ दोहन क्रिया से क्रियान्तर गमन रूपी क्रिया लक्षित होती है अतएव दुह्यमानासु एवं गोषु में सप्तमी विभक्ति है।

कारक - विभक्तियों का अर्थ - बोधक चार्ट

विभक्ति	अर्थ जिसमें विभक्ति आती है	विशेष विवरण।
प्रथमा	1- कर्ता में (अनुक्त)	जब क्रिया कर्तृवाच्य की हो
	2- कर्म में (उक्त)	जब क्रिया कर्मवाच्य की हो
	3- सम्बोधन में	
द्वितीया	कर्म में (अनुक्त)	जब क्रिया कर्तृवाच्य की हो
तृतीया	कर्ता में (अनुक्त) करण में	जब क्रिया कर्मवाच्य की हो
चतुर्थी	सम्प्रदान में	
पञ्चमी	अपादान में	
षष्ठी	1- कर्ता में 2- कर्म में 3. सम्बन्ध में	जब क्रिया कृदन्त की हो परन्तु शतृ, शानच्, क्त, क्तवतु, खलर्थ, उ और उकञ् इन कृत प्रत्ययों को छोड़कर। नोट - कर्ता और कर्म दोनों की उपस्थिति में भी कर्म में षष्ठी होती है।
सप्तमी	अधिकरण में	

इति कारक प्रकरणम्